एम० ए० प्रथम वर्ष
द्वितीय प्रश्नपत्र- हिन्दी- साहित्य का इतिहास
द्वितीय सेमेस्टर
विषय :- रीतिकाल का नामकरण एवं
प्रमुख प्रवृत्तियाँ :-

व्याख्यान द्वारा :-
डॉ० मंजू शुक्ला [Asst. Professor]
हिन्दी संकाय
नेहरू ग्राम भारती (मानित)
विश्वविद्यालय प्रयागराज उ०प्र०

Email ID:- drmanjushuklajaunpur@gmail.com

-: रीति काल की प्रमुख प्रवृत्तियाँ :-

रीतिकालीन काव्य में प्राप्त प्रवृत्तियाँ इस युग की परिस्थितियों से पूर्ण सामंजस्य रखती हैं। इन काव्यों का सृजन सामन्ती छत्रछाया में हुआ अतः उनमें वे सभी विशेषताएँ प्राप्त होती हैं जो एक दरबारी काव्य में होनी चाहिए। रीतिकालीन कवि या साहित्यकार जनसाधारण या जनता का कवि न होकर 'राज दरबार' का कवि होता था। इस कारण इसके काव्य में अलंकरण की प्रमुखता, चमत्कार प्रदर्शन की प्रवृत्ति तथा श्रृंगारिकता का सहज पुट आना स्वाभाविक है। सामान्यतः इस काल के काव्य की मुख्य विशेषताएँ निम्नवत हैं-

1. लक्षण- ग्रंथों का सृजन या रीतिनिरूपण:-
2. श्रृंगाररस की प्रमुखता :-
3. अलंकार की प्रमुखता :-
4. भक्ति नीति की प्रवृत्ति :-
5. राजदरबारी कवियों का आधिक्य:-
6. कामुकता की प्रवृत्ति -
7. प्रकृति के उद्दीपन रूप का चित्रण-

1- लक्षण - ग्रंथों का सृजन या रीतिनिरूपण :-

रीतिकालीन कवियों ने संस्कृत काव्यशास्त्र के आधार पर अपने लक्षण- ग्रंथों का सृजन किया है लेकिन संस्कृत काव्यशास्त्र के सूक्ष्म चिन्तन तथा विश्लेषण का इनके ग्रन्थों में अत्यन्त अभाव है। सामान्यतः इन कवियों का पाठकों को काव्यशास्त्र की जानकारी कराना तथा उसकी मर्मज्ञता का प्रदर्शन करना ही मूल उद्देश्य रहा है। कहने का आशय यह कि रीतिकालीन कवियों ने संस्कृत के लक्षण ग्रंथों के आधार पर रस, अलंकार, छन्द, गुण-दोष, रीति इत्यादि की विशद् व्याख्या अपने काव्यों में किया है। केशवदासकृत 'कविप्रिया', चिन्तामणि रचित 'कवि कुल कल्पतरु', 'श्रृंगार मंजरी', मतिराम प्रणीत 'ललितललाम', कविभूषण की 'शिवराजभूषण', कविदेव कृत 'रस विलास' इत्यादि इसी प्रकार के लक्षण- ग्रंथ या रीति निरूपक रचनाएँ हैं।

2- **शृंगार रस की प्रमुखता :-**

रीतिकालीन काव्य में श्रृंगार रस की प्रमुखता है। इनके काव्यों में नख-शिख वर्णन द्वारा नायिका के रूप-सौन्दर्य का चित्रण किया गया है। रीतिकाल के श्रृंगार में रूपलिप्सा, प्रेमजन्य विलासिता, शारीरिक सुख की कामना, भोगेच्छा एवं नारी के प्रति सामन्ती दृष्टिकोण परिलक्षित होता है। रीतिकालीन काव्यों में श्रृंगारिकता की प्रमुखता पर लक्ष्य करके डॉ० नगेन्द्र ने कहा है कि- "ढांचा चाहे जैसा भी रहा हो, इसमें ढली शृंगारिकता ही।" रीतिकाल के अधिकांश कवियों ने परिवेश के अनुसार श्रृंगार के विलासोन्मुख स्वरूप को वर्ण्य विषय के रूप अपनाया है। उदाहरणार्थ पद्माकर की पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

गुलगुली गिल में गलीचा है गुनीजन है,
चाँदनी है, चिक है, चिरागन की माला है।
कहै पद्माकर त्यों गजक गिजा है सजी,
सेज है सुराही है सुरा है और प्याला है।।"

3. **अलंकार की प्रमुखता ->**

इस काल के काव्य में अलंकार पर विशेष ध्यान दिया गया है। सम्भव है कि इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए मिश्र-बंधुओं ने 'रीतिकाल' को 'अलंकृति काल' कहा हो। इन कवियों को अलंकार शास्त्र के ज्ञान के अभाव में सम्मान मिलना दुष्कर था। फलतः इस काव्य में अलंकारिता अत्यधिक पुष्पित और पल्लवित हुई। वास्तव में केशवदास इसी के पक्षधर थे-

जदपि सुजाति सुलच्छनी सुवरन सरस सुवृत्त।
भूषन बिनु न बिराजई, कविता, बनिता मित्त।।

अलंकारों के अभाव में कविता- कामिनी सुन्दर नहीं हो सकती, चाहे वह सभी गुणों से युक्त क्यों न हो? अलंकारों की अधिकता के कारण ही रीतिकाव्य में ऊँची उड़ान और चमत्कार प्रदर्शन की प्रवृत्ति परिलक्षित

होती है। बिहारी की उत्प्रेक्षाएँ बहुत ही मनोहारी प्रतीत होती है जैसे-

सोहत ओढ़ै पीत पट श्याम सलोने गात।
मनौं नीलमनि सैल पर आतप पर्‌यौ प्रभात॥

4. भक्ति नीति की प्रवृत्ति :-

रीति कालीन काव्यों का प्रमुख विषय तो शृंगारिकता ही रही है किन्तु भक्ति तथा नीति सम्बन्धी अनेको उक्तियाँ यत्र-तत्र प्राप्त होती हैं। इस काल के अधिकांश कवियों ने अपने जीवन के संध्याकाल में सम्भवतः पाप बोध के कारण भक्ति एवं वैराग्य से परिपूर्ण रचनाओ का सृजन किया। भक्ति के सम्बन्ध में बिहारी का बोला वक्तव्य है-

॥ बंधु भये का दीन के, को तार्‌यौ रघुराई।
तूठे-तूठे फिरत हौ, झूठे बिरद कहाई॥

कहने का आशय यह कि तुम्हारे दीनबन्धु और पतित पावन नाम को तभी सार्थक समझूँगा, जब तुम मुझ दीन के बन्धु बनोने और मेरा उद्धार करोगे। इन वाक्यों के द्वारा कवि अपने उद्धार की प्रार्थना कर रहा है। इसी प्रकार बिहारी के नीति सम्बन्धी दोहे भी हैं, जैसे -

नहीं पराग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास यहि काल।
अली कली ही सो बँध्यो, आगे कौन हवाल॥

इस दोहे में बिहारी ने नीति कथन किया है कि हे भ्रमर रूपी महाराज जयसिंह। यदि तुम अपना कर्त्तव्य और राज्यकार्य भूलकर अभी से मेरी कली के रूप जाल में तल्लीन हो जाओगे तो उस समय क्या होगा, जब उसमें पराग तथा मधुर-मधु का विकास होगा। अर्थात यौवन के आने पर अंग-प्रत्यंग विकसित हो जायेंगे तब आपकी क्या दशा होगी? इन्ही बातों का अनुसरण कर राज्य कार्य में तल्लीन हो गये।

5→ राजदरबारी कवियों का आधिक्य → रीतिकालीन अधिकांशतः कवि राज-दरबारों मे अपने आश्रयदाताओं की छत्रछाया में जीवनयापन करते थे, इसी कारण इनके काव्यों में चाटुकारिता आधिक थी। इन कवियों ने अपने आश्रयदाताओं की दानवीरता और युद्ध कौशल का अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन किया है। उदाहरणार्थ कवि भूषण की पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

इन्द्र जिमि जंभ पर, बाड़व सुअंभ पर
रावन सदंभ पर रघुकुल राज है।
पौन बारिबाह पर, सम्भु रतिनाह पर,
ज्यों सहस्त्रबाहु पर राम द्विजराज है।
दावा द्रुमदंड पर चीता मृगझुंड पर,
भूषण वितुंड पर जैसे मृगराज हैं।
तेज तम अंस पर, कान्ह जिमि कंस पर,
त्यों मलेच्छ बंस पर सेर शिवराज हैं।

6→ कामुकता की प्रवत्ति → इस काव्य के कवियों के काव्य का मुख्य वर्ण्य विषय नारी-चित्रण ही रहा है। इन कवियों ने नारियों को कामुकता की भावना से अवलोकित किया, इसलिए उनकी वृत्ति नायिका के अंग-प्रत्यंग की शोभा का निरूपण करने, उनके हाव-भाव तथा विलास चेष्टाओं को आधिकाधिक रूप में चित्रित किया है। ये कवि नारी को पुरुष के आकर्षण का केन्द्र तथा अंकशायिनी मात्र समझते थे। इसके सापेक्ष में महाकवि देव की पंक्तियाँ द्रष्टव्य है-

कौन गने पुरतन नगर कामिनी एकै रीति।
देखत हरै विवेक को चित्त हरै करि प्रीति।।

रीतिकालीन अधिकांश कवियों ने नारी के प्रति इसी दृष्टिकोण को स्वीकार करते हुए उसके रूप के प्रति आसक्ति का पूर्ण परिचय प्रस्तुत किया है।

इस काल के नारी भावना के प्रति आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपना मत दिया है कि- "यहाँ नारी कोई व्यक्ति या समाज के संगठन की इकाई नहीं है, बल्कि सब प्रकार की विशेषताओं के बंधन से यथासंभव मुक्त विलास का एक उपकरण मात्र है।"

प्रकृति के उद्दीपन रूप का चित्रण →

रीतिकालीन कवियों ने प्रकृति चित्रण प्रायः उद्दीपन तथा आलंकारिक रूप में किया है। प्रकृति का आलम्बन रूप में चित्रण बहुत कम हुआ। प्रकृति के उद्दीपन रूप का चित्रण बिहारी देव, मतिराम, भिखारीदास इत्यादि कवियो ने किया है। परम्परागत रूप में षड्ऋतु वर्णन एवं बारहमासे का चित्रण भी इस काल के कवियों ने किया है। किन्तु उसमें कोई नवीनता नहीं है। सेनापति को ऋतु वर्णन मे अद्वितीय सफलता मिली है।

वर्षाकाल का एक चित्र द्रष्टव्य है:

"सेनापति उनए नए जलद सावन के,
चारिहू दिसान घुमरत भरे तोय कै।
सोभा सरसाने न बखाने जात कैहू भाँति
आने हैं पहार मानो काजर के ढोय कै।।"

रीति काल के प्रतिनिधि कवि बिहारी के काव्य में भी प्रायः सभी ऋतुओं का वर्णन उपलब्ध होता है। निम्न दोहे में वासन्ती मकरन्द से तृप्त भौंरों का अत्यन्त मनोरम चित्र अंकित किया गया है:

छकि रसाल सौरभ सने मधुर माधवी गन्ध।
ठौर-ठौर झौंरत झपत भौंर-झौंर मधु अन्ध।।

रीतिकाल मे यद्यपि प्रकृति चित्रण का अभाव नहीं है तथापि प्रकृति के प्रति इनका दृष्टिकोण तटस्थ था। छायावादी कवियों ने जिस प्रकार प्रकृति को आलम्बन बनाकर मनोहर काव्य की, वैसा रीतिकाल के कवि नहीं कर पाए।

डॉ० मंजू शुक्ला
(सहायक आचार्य हिन्दी)
नेहरू ग्राम भारती (मानित)
विश्वविद्यालय प्रयागराज